दैनिक जागरण

शिखर पर हमेशा जगह होती है

उच्च शिक्षा के अराजक केंद्र

जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में हुई हिंसा के मामले में दिल्ली पुलिस की ओर से पेश किए गए प्रारंभिक तथ्यों से यदि कुछ रेखांकित हो रहा है तो यही कि दोनों पक्षों के छात्र किसी ने किसी रूप में हिंसक गतिविधियों में शामिल थे। चूंकि अभी पुलिस की जांच पूरी नहीं हुई और उसकी ओर से नकाबधारी तत्वों को बेनकाब किया जाना भी शेष है इसलिए किसी अंतिम निष्कर्ष पर नहीं पहुंचा जा सकता। दिल्ली पुलिस को न केवल जल्द से जल्द अंतिम निष्कर्ष पर पहुंचना होगा, बल्कि हिंसा में लिप्त तत्वों के खिलाफ ऐसे पुख्ता सुबूत भी जुटाने होंगे जिससे अराजक तत्वों को दंड का भागीदार बनाया जा सके। उसे यह काम प्राथमिकता के आधार पर इसलिए करना होगा, क्योंकि यदि उसने जेएनयू परिसर की हिंसक गतिविधियों पर समय रहते आवश्यक कार्रवाई की होती तो शायद जो स्थिति बनी उससे बचा जा सकता था। यह अच्छा नहीं हुआ कि पुलिस न तो तब हरकत में आई जब जेएनयू में रजिस्ट्रेशन कराने गए छात्रों को पीटने के साथ वहां इंटरनेट बाधित किया जा रहा था और न ही तब जब वहां नकाबधारी तत्व घुसकर उत्पात मचा रहे थे। दिल्ली पुलिस को अपनी जांच में तत्परता का परिचय देना चाहिए। इसी के साथ यह भी आवश्यक है कि विभिन्न राजनीतिक दल पुलिस की अधूरी जांच के आधार पर अपनी राजनीति चमकाने से बाज आएं।

यह ठीक है कि जेएनयू एक नामचीन विश्वविद्यालय है, लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि परस्पर विरोधी दल उसे अपनी राजनीति का अखाड़ा बना लें। जेएनयू के अशांत और उपद्रव ग्रस्त रहने की एक बड़ी वजह राजनीतिक दलों की दखलंदाजी है। इससे संतुष्ट नहीं हुआ जा सकता कि मानव संसाधन विकास मंत्री यह कह रहे हैं कि विश्वविद्यालयों को राजनीति का अड्डा नहीं बनने दिया जाएगा, क्योंकि वे तो राजनीति के अड्डे बन चुके हैं। यदि विश्वविद्यालय राजनीति के अड्डे बने रहे तो फिर वहां वैसा कुछ होता ही रहेगा जैसा जेएनयू में हुआ। विश्वविद्यालय ज्ञान के केंद्र हैं न कि राजनीति की नई खेप तैयार करने के कारखाने। समझना कठिन है कि छात्र संगठनों को विश्वविद्यालयों में बेलगाम होने की इजाजत क्यों मिली हुई है? जेएनयू सरीखे विश्वविद्यालयों में कई छात्र पढ़ने के नाम पर न केवल नेतागीरी करते हैं, बल्कि शिक्षा से इतर मसलों पर हंगामा भी करते हैं? इससे भी खराब बात यह है कि वे विश्वविद्यालय को अपनी निजी जागीर समझने लगते हैं। इसी मुगालते के कारण जेएनयू में छात्रों के एक गुट ने प्रवेश प्रक्रिया और परीक्षाएं बाधित करने की हिमाकत की। यह खुली गुंडागर्दी के अलावा और कुछ नहीं। ऐसी गुंडागर्दी को केवल पुलिस के भरोसे नहीं रोका जा सकता।

नकेल जरूरी

झारखंड मानव तस्करी के लिए पूरे देश में बदनाम रहा है। गांव की गरीब बेटियों को मानव तस्कर नौकरी दिलाने का झांसा देकर या बेहतर जीवन का सब्जबाग दिखाकर अपने जाल में फंसा लेते हैं और फिर वे शहर पहुंचकर इनके मकड़जाल में फंसती चली जाती हैं। पिछले दिनों रांची की बेटी को उत्तर प्रदेश के बुलंदशहर ले जाकर शादी के लिए बेचे जाने का मामला प्रकाश में आया। गरीब घर की बेटी को शादी का झांसा देकर बुलंदशहर ले जाया गया और वहां उसे 80 हजार रुपये में बेचा जा रहा था। इस दौरान युवती को साड़ी पहनने एवं मुस्कुराते रहने के लिए मजबूर किया गया। जब इस मामले को लेकर हंगामा हुआ तो बात पुलिस तक पहुंची और दो महिला समेत सात लोग गिरफ्तार किए गए। ऐसा ही गुमला की दो नाबालिग किशोरियों के साथ हुआ। उन्हें काम दिलाने का झांसा देकर पंजाब ले जाकर देह व्यापार के दलदल में ढकेल दिया गया। किसी तरह जब किशोरी इन दलालों के चंगुल से भागी तो मामले का खुलासा हुआ। झारखंड में ऐसे सैकड़ों मामले हैं, जहां गरीब परिवार के बच्चे इन मानव तस्करों के निशाने पर रहते हैं। गरीब अपने परिवार के भरण पोषण और अंधकार में डूबे भविष्य से निकलने की जद्दोजहद में इन मानव तस्करों के चंगुल में फंस जाते हैं। इसके लिए कहीं न कहीं सरकारी व्यवस्था भी जिम्मेदार है। पुलिस के ढीले रवैये के कारण इन मानव तस्करों पर कड़ी कार्रवाई नहीं हो पाती है या इतने विलंब से होती है कि न्याय नहीं मिल पाता है। जरूरत है पुलिसिंग को मजबूत करने के साथ ही फास्ट ट्रैक कोर्ट में इनकी सुनवाई करने की, जिससे ऐसे मामलों का निपटारा जल्द से जल्द हो और लोगों का न्याय पर विश्वास जगे। इसके साथ ही लोगों को जागरूक करने के लिए गांवों में जागरूकता अभियान भी चलाया जाना चाहिए। चाइल्ड वेलफेयर कमेटी को भी और अधिक संसाधन एवं शक्ति दिए जाने की आवश्यकता है, जिससे वह बेहतर तरीके से बच्चों के पुनर्वास के लिए काम कर सके।

झारखंड जैसे राज्य में मानव तस्करों पर कड़ी कार्रवाई होनी चाहिए। जरूरत है पुलिसिंग को मजबूत करने के साथ ही फास्ट ट्रैक कोर्ट में इनकी सुनवाई करने की, जिससे ऐसे मामलों का निपटारा जल्द से जल्द हो और लोगों का न्याय पर विश्वास जगे

दोराहे पर मुस्लिम समाज

कैप्टन आर विक्रम सिंह

आखिर बांग्लादेश, पाकिस्तान, अफगानिस्तान के अल्पसंख्यकों को भारत की नागरिकता देने से भारतीय मुस्लिमों के हित कैसे प्रभावित होते हैं?

नागरिकता संशोधन कानून के खिलाफ सड़कों पर उतरे लोगों और खासकर मुस्लिम समाज की प्रतिक्रिया चकित करने वाली है। यह अचानक नहीं हुआ। इसे समझने के लिए वापस 1946-47 में जाना होगा। 1946 में 14 अगस्त को जिन्ना द्वारा घोषित 'डायरेक्ट एक्शन' भारत विभाजन की पूर्वपीठिका था। कांग्रेस के पास इस पूर्व नियोजित नरसंहार का मुकाबला कर पाने का कोई हथियार नहीं था। गांधी जी का एक लाइन का अहिंसक फॉर्मूला यह था कि वध होने के लिए स्वयं को हत्यारों के सम्मुख प्रस्तुत कर दो। असहायता की यह विरासत आजाद भारत की नीति बनी और हमने इसके परिणाम भी देखे। विभाजन के दंगों में सदियों से प्यार- मुहब्बत से साथ रहने वालों ने तलवारें निकालीं, एक दूसरे की गर्दनें काटीं, औरतें लूटीं। सैकड़ों साल साथ रहने के बाद भी जो घृणा थी वह एक ही झटके में सतह पर आ गई।

कांग्रेस के नेताओं, खासकर पंडित नेहरू, मौलाना आजाद आदि ने पाकिस्तान जाने वाले बहुत से लोगों के शिविरों में भ्रमण कर उन्हें भारत में रुकने को प्रेरित किया कि हम सेक्युलर देश हैं। यह हिंदुओं का देश नहीं है। वे जानते थे कि अगर यह हिंदुओं का देश बन गया तो नेतृत्व वीर सावरकर जैसों के हाथ चला जाएगा और उनकी भूमिका समाप्त हो जाएगी। उधर पाकिस्तान में हिंदुओं को रोक लेने वाला कोई नहीं था। आज हिंदू आबादी वहां 23 प्रतिशत से घटकर 1.5-2 प्रतिशत रह गई है, जबकि भारत में मुस्लिम आबादी जो आजादी के वक्त की 9.8 प्रतिशत थी अब 14-15 प्रतिशत हो चुकी है। पाकिस्तान के रास्ते से वापस लौट आने के बाद यहां के सुरक्षित माहौल में मुसलमानों से भारतीय अस्मिता से एकाकार हो जाने की हमारी अपेक्षा स्वाभाविक थी, लेकिन यदि मुसलमान सेक्युलर हो जाते तो उन्हें एक वोट बैंक बनाए रखने की योजना बेकार हो जाती। इसलिए जरूरी था कि उनकी अलग बस्तियां हों, अलग पहचान और अलग संस्थान हों। हिंदुओं के समान मुसलमानों की समस्याएं शिक्षा, रोजगार की ही तो हैं। भारतीय मुसलमान भी तो मलेशिया, इंडोनेशिया के मुसलमानों की मलय या इंडोनेशियाई संस्कृति के समान अपनी भारतीय संस्कृति पर गर्व कर सकते थे। वे भी इंडोनेशिया की तरह राम को अपना पूर्वज या महापुरुष मान सकते थे, पर उन्हें अरबों, तुर्कों से जोड़ा गया। उन्हें राम मंदिर के विरुद्ध मुकदमे में भी खड़ा कर दिया गया।

दरअसल मुस्लिम समाज को भारत की संस्कृति-सभ्यता से जोड़े रखने के प्रयास ही नहीं हुए। राजनीतिक आवश्यकताओं ने साझा संस्कृति ही नहीं विकसित होने दी। आजादी से पहले इस अलगाव के लिए हम अंग्रेज सरकार की नीतियों, शाह वलीउल्लाह, सैयद अहमद, अल्लामा इकबाल, मुहम्मद अली जिन्ना को दोषी मान सकते थे, लेकिन आजादी के बाद तो नेहरू भारत के नए भाग्य विधाता थे। अंग्रेजों की जेल में भारत और विश्व इतिहास पर पुस्तकें लिखते नेहरू को उन वतनपरस्त मुसलमानों जैसे हाकिम खां सूर, इब्राहिम गार्दी जो महाराणा और मराठों के सेनाओं में लड़ते हुए शहीद हुए थे, की याद नहीं थी। दारा शिकोह को उन्होंने शायद पढ़ा नहीं था। हमारी संस्कृति-साहित्य का हिस्सा बन चुके कबीर, रसखान, बाबा फरीद, दादू को उन्होंने कितना जाना, वे ही बता सकते थे।

पता नहीं उन्होंने अब्दुर्रहीम खानखाना का यह दोहा 'जेहि रज मुनि पतनी तरी, सो ढूंढत गजराज' कभी सुना था या नहीं, लेकिन उन्होंने मुस्लिम समाज में भारतीय इतिहास, संस्कृति और राष्ट्रीयता का भाव जागृत करने के लिए कुछ नहीं किया। वे चाहते तो भारतीय मुस्लिम समाज को राष्ट्रीय एकता की सबसे मजबूत कड़ी बना सकते थे। वे कह सकते थे कि अगर भारत टूटा तो सोचो, तुम कितने टुकड़ों में होगे। हर खंडित टुकड़े में भारत की विरासत तुम्हारी रक्षा के लिए नहीं होगी, लेकिन नहीं, मुसलमान भारतीयता से दूर सिर्फ वोट बैंक बनता गया। बड़ी-बड़ी समस्याओं को विरासत में हमारे हवाले कर नेहरू जी इतिहास पटल से विदा हुए। उनके आगे पीछे वह पीढ़ी भी विदा हो गई जिसे भारत की फिक्र थी। अब शुद्ध रूप से सत्ता आकांक्षियों का राज आ गया था।

भारतीय मुस्लिम समाज राष्ट्रीय नेतृत्व के अभाव में अपनी मूल समस्या पाकिस्तान को लेकर एक स्पष्ट अवधारणा विकसित ही नहीं कर सका, दुविधाग्रस्त ही रहा। रफी अहमद किदवई जैसे नेता दोबारा नहीं आए। आरिफ मुहम्मद खान एक बड़ी संभावना थे, लेकिन परिस्थितियां ही नहीं बनीं। वे सवाल जिन्हें और उलझाकर नेहरू जी रुखसत हो गए थे, उनके समाधान का सिलसिला अब जाकर शुरू हुआ।

अनुच्छेद 370 व्यतीत इतिहास का भाग हो चुका है। तीन तलाक का हटना असंभव लगता था, पर वह संभव हुआ। आतंकवाद से रक्तरंजित मजबूर भारत आज सशक्त भारत है। आशा थी कि अनुच्छेद 370 के हटने का भारतीय मुस्लिम समाज स्वागत करेगा, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। भारत का हित और भारतीय मुस्लिम समाज का हित अलग-अलग कैसे हो सकता है? हम अपनी अल्पसंख्यक राजनीति को लेकर गलत रास्तों पर चले हैं। भारत का मुसलमान आज भी दोराहे पर खड़ा है। आज जब नागरिकता संशोधन कानून को लेकर हिंसक प्रदर्शनों का दौर चल रहा है तो संदेह होता है कि कहीं कोई दूसरा एजेंडा इन्हें प्रभावित तो नहीं कर रहा है। आखिर बांग्लादेश, पाकिस्तान, अफगानिस्तान के अल्पसंख्यकों को भारत की नागरिकता देने से भारतीय मुस्लिमों के हित कैसे प्रभावित होते हैं? संविधान की रक्षा का दम भरते प्रदर्शनकारियों से सीधा सवाल है कि क्या संविधान ने देश को धर्मशाला बनाया है? यदि वे चाहते हैं कि पाकिस्तानी, बांग्लादेशी, रोहिंग्या भारत के नागरिक बन जाएं तो 1946 में यूपी, बिहार, बंगाल के मुसलमानों को जिन्ना के साथ खड़े होकर पाकिस्तान मांगने की जरूरत क्या थी?

हमारी समस्या क्या है? हमारी समस्या वह धार्मिक एजेंडा है जिसके तहत हजारों रोहिंग्या म्यांमार से लाकर जम्मू में बसा दिए गए। करोड़ों बांग्लादेशी घुसपैठिए इस देश के नागरिक बनने की फिराक में हैं। बहुत से पाकिस्तानी यहां आकर गुम हो गए हैं। समस्या भारतीय मुसलमान नहीं, बल्कि वह मानसिकता है जो उन्हें भारतीयता से अलगाव की प्रेरणा देती है। समस्या आज भी शिलादित्य जैसे वे लोग हैं जो खानवा के युद्ध के दौरान अपने हजारों सैनिकों के साथ राणा सांगा को छोड़कर बाबर से जा मिलते हैं। रात में किले के फाटक खोल देने वाले पहले भी थे, आज भी हैं। अफसोस होगा अगर कल के इतिहासकार यह कहेंगे कि सदियों से भारत का अटूट हिस्सा रहे एक तबके ने अपनी क्षुद्र सोच के चलते सशक्त होते भारत में अपनी हिस्सेदारी गंवा दी।

(लेखक पूर्व सैनिक एवं पूर्व प्रशासक हैं)

response@jagran.com

संकट की ओर ले जाता अतिवादी आग्रह

गिरीश्वर मिश्र

अन्य विश्वविद्यालयों से अलग जेएनयू के भीतर एक निहायत निजी किस्म की संस्कृति विकसित हुई है

यह अत्यंत खेदजनक है कि भारत के कई प्रतिष्ठित शिक्षा संस्थानों में शिक्षारत भारत की युवा प्रतिभाओं का बहुमूल्य समय ऐसे प्रदर्शनों और गतिविधियों में बीत रहा है जो अनुत्पादक तो हैं ही, विध्वंसक भी साबित हो रही हैं। दिल्ली के विख्यात शिक्षा संस्थान जेएनयू यानी जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में करीब तीन महीने तक पढ़ाई-लिखाई का काम लगभग ठप रहने के बाद अब हालात कुछ सामान्य होते दिख रहे हैं। इन महीनों में जेएनयू के कई भवनों में विरोध के लिए लामबंद हुए छात्रों द्वारा ताला बंद कर शिक्षक और विद्यार्थियों का प्रवेश जबरन रोक दिया गया। नामांकन करने गए छात्रों के साथ मारपीट भी की गई और नामांकन बाधित करने के लिए सर्वर कक्ष में तोड़फोड़ की गई। इसके बाद छात्रों के साथ मारपीट की गई। यह मारपीट नकाबधारियों के एक गुट की ओर से की गई जिसमें कई छात्र घायल हुए। चूंकि घायल छात्र दोनों पक्षों के हैं इसलिए पता नहीं चल पा रहा है कि किसने किसे निशाना बनाया? इस उपद्रव के लिए जो भी जिम्मेदार हो, इस तरह की हिंसक घटनाएं किसी भी शिक्षा प्रेमी के लिए दुखदायी हैं। इससे अधिक दुखदायी यह है कि राजनीतिक दखल शिक्षाजगत की चुनौतियों को और जटिल बनाता जा रहा है। यह स्थिति उच्च शिक्षा की प्रणाली पर पुनर्विचार की अपेक्षा करती है। शिक्षा केंद्रों को राजनीतिक प्रयोगशाला बनाना किसी भी तरह स्वीकार्य नहीं है।

जेएनयू के मामले में यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि भौतिक, व्यावहारिक और बौद्धिक दृष्टि से इसका एक खास तरह का चरित्र निर्मित हुआ है। यह उच्च शिक्षा के इतिहास में सरकार द्वारा एक विशेष तरह के सेक्युलर शिक्षा केंद्र के निर्माण, पोषण और विकास का एक अद्भुत नमूना है। अन्य सरकारी विश्वविद्यालयों से अलग जेएनयू में चहारदीवारी के भीतर एक निहायत निजी किस्म की संस्कृति विकसित होती रही, जो आधुनिक भारतीय शिक्षा के इतिहास में किसी संप्रदाय से कम नहीं आंकी जा सकती। इसकी छाया सब ओर फैल रही थी, भले ही वह अनोखे और एकांगी वैचारिक लेंस से लैस हो। इसका वैचारिक रुझान जग जाहिर है। इसके आख्यानों और मिथकों की शृंखला प्रचारित होती रही। यह सब करने के लिए परिसर में प्रोत्साहन और सुविधाएं भी उदारभाव से उपलब्ध होती रहीं। ये सुविधाएं इस तरह उपलब्ध होती रहीं कि आंतरिक व्यवस्था और अव्यवस्था की रूढ़ियां अनदेखी ही चलती रहीं और उनके चलते रहने के कारण वे प्रामाणिक और उपयुक्त भी ठहराई जाती रहीं। यहां अनेक बौद्धिक विमर्शों का उदय हुआ। भारत के इतिहास, संस्कृति, प्रजातंत्र और अर्थव्यवस्था सबकी एक विशेष तरह की व्याख्याएं दी गईं, जो सीमित तथ्यों को लेकर चल रही थीं। बौद्धिक जगत में वैचारिक स्थापनाओं में विविधता होना लाजमी होती है। उनका आकलन, विश्लेषण और आलोचना सब कुछ होता है। अकादमिक जगत में यह सब जायज ठहरता है, परंतु समाज और देश भौतिक सत्ता मात्र नहीं होते और न उनका ज्ञान ही शाश्वत होता है। चूंकि आध्यात्मिक ज्ञान को छोड़ दें तो शेष ज्ञान देश और काल के सापेक्ष ही होता है इसलिए ज्ञान के सामान्य क्षेत्र में समग्र को देखने की चेष्टा होनी चाहिए। ज्ञान पाने में उदारता और सहिष्णुता, दोनों ही आवश्यक हैं। संविधान में स्वीकृत अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता भी यही कहती है कि संवाद द्वारा पारस्परिक समझ विकसित की जाए। किसी भी तरह का अतिवादी आग्रह संकट की ओर ले जाता है। अधूरे ज्ञान के चलते विचार और ज्ञान की देशज परंपराएं खारिज करने और उनकी अवांछित व्याख्या करना दुर्भाग्यपूर्ण है। गांधी जी का विचार था कि हम अपनी ही जमीन पर खड़े रहें और खिड़कियां खुली रखें ताकि बाहरी हवाएं इस तरह आती-जाती रहें कि हमें उखाड़ न फेंके।

राजनीतिक दलों के वर्चस्व की लड़ाई में जेएनयू की व्यवस्था को चलने ही नहीं दिया जा रहा है। विपक्ष के कई बडे नेता मुखर उपस्थिति दर्ज कराकर स्थानीय मुद्दों को राष्ट्रीय प्रश्न बनाकर पेश कर रहे हैं। सामान्यतः शिक्षा केंद्रों का राजनीतिक उपयोग अल्पकालिक फायदे पहुंचाता लग सकता है, लेकिन यह ज्ञान अर्जित करने की परंपरा को खंडित करने के लिए पर्याप्त होता है।

(लेखक पूर्व प्रोफेसर एवं पूर्व कुलपति हैं)

response@jagran.com

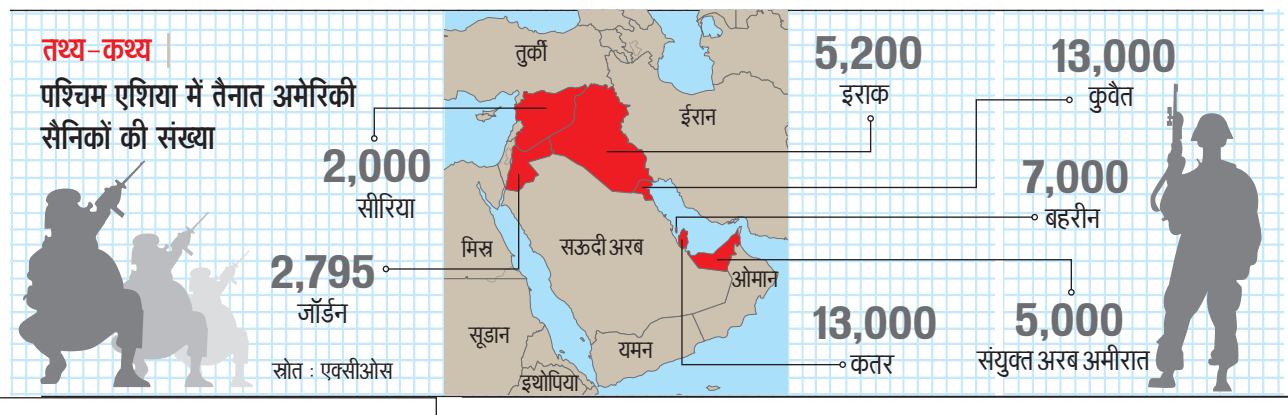

ऊर्जा

अमंगल से मंगल

अमंगल अर्थात मनुष्य के जीवन की वह स्थिति जिसमें मनुष्य अपने जीवन के किसी एक काल खंड में किसी विशेष संकट में पड़कर अपना अपकर्ष देख रहा होता है। जैसे कि वह किसी विशेष दुर्घटना का शिकार हुआ हो अथवा किसी ऐसी स्थिति में फंस गया हो, जिसके कारण उसे अपयश का भागीदार बनना पड़ा हो। इसके विपरीत मनुष्य-जीवन की मांगलिक स्थिति वह होती है, जब वह स्वस्थ, संपन्न और यशस्वी होकर जीवन जीता है तथा किसी भी विशेष अघटित घटना का शिकार नहीं बनता।

इस तरह उसके जीवन की ये दोनों स्थितियां दो विपरीत ध्रुवों पर खड़ी होती हैं और प्रायः कभी भी एक-दूसरे को उत्पन्न करने की वजह नहीं बनतीं। हमारी परंपरा में अनेक उदाहरण हैं जिनसे यह देखने को मिल जाता है कि यद्यपि व्यक्ति के जीवन में घटित तो हुआ था अमंगल, किंतु उसका जो परिणाम मिला, वह मंगलदायक हुआ। दशरथ चक्रवर्ती सम्राट थे, किंतु उनके कोई संतान नहीं थी। एक बार वे शिकार करने के लिए वन की ओर गए। बहुत समय तक जब उन्हें कोई शिकार नहीं मिला तब वे वहीं जंगल में ही कुछ क्षण विश्राम करने के लिए एक सरोवर के पास बैठ गए। कुछ ही देर में उन्हें लगा कि उस सरोवर के किनारे पेड़ की आड़ में जैसे कोई जानवर पानी पी रहा हो तो उन्होंने बिना देखे ही उस पर अपना बाण चला दिया। शिकार घायल हुआ और उसने अपना दम तोड़ दिया, पर यह क्या, शिकार कोई जानवर न होकर शांतनु और ज्ञानवानी का पुत्र श्रवणकुमार था।

श्रवण के माता-पिता अंधे थे। उन्होंने जब अपने पुत्र की मृत्यु का समाचार सुना तो व्यथित होकर राजा दशरथ को श्राप दिया कि राजन! जिस प्रकार हम अपने पुत्र के वियोग में अपने प्राण त्याग रहे हैं, उसी तरह से तुम्हें भी अपने पुत्र के वियोग में प्राण त्यागने पड़ेंगे। तब तक राजा पुत्रहीन थे, किंतु बाद में श्रीराम उन्हें पुत्र रूप में मिले और उनका जीवन मांगलिक हो गया।

डॉ. गदाधर त्रिपाठी

जीवन से हारने के बढ़ते मामले

अनीश कुमार

मौजूदा दौर में जिंदगी की आपाधापी और अकेलापन जीना मुश्किल ही नहीं कर रहे, बल्कि जिंदगी भी छीन रहे हैं

जाने-माने चेहरे कुशल पंजाबी की आत्महत्या ने फिर यह सवाल उठाया है कि युवाओं का सफल, सेहतमंद और खुशहाल दिखती जिंदगी से आखिर मोहभंग क्यों हो रहा है? चिंतनीय है कि जाने-माने चेहरे ही आम युवा भी छोटी-छोटी परेशानियों से होकर जिंदगी से मुंह मोड़ रहे हैं। हौसले और सकारत्मकता की उम्र में उनका मन थका-हारा सा है। ऐसी घटनाओं पर गौर करें तो सामने आता है कि खुदकुशी करने वाले अधिकतर युवाओं का जीवन कोई दयनीय स्थिति में नहीं था। कहना गलत नहीं होगा कि आज के युवाओं में भावनात्मक टूटन और पलायन की प्रवृत्ति तेजी बढ़ रही है। जीवन से जूझने की क्षमता कम हो रही है।

करियर, तरक्की, सब कुछ जुटा लेने की भागमभाग और बिखरते रिश्तों से जुड़ी बातें ही उन्हें कमजोर कर रही हैं, जबकि इन सभी समस्याओं का हल मेहनत या संवाद से निकाला जा सकता है। सोच में ठहराव लाकर इस आपाधापी से बाहर आने की राह तलाशी जा सकती है। अफसोस कि ऐसा नहीं हो पा रहा है। इसकी बड़ी वजह इस पीढ़ी का पारिवारिक-सामाजिक माहौल से कट जाना भी है। आभासी दुनिया की बनावटी सक्रियता-लोकप्रियता और बाहरी दुनिया को दिखने वाले दंभ को छोड़ दें तो अधिकतर युवा आत्मकेंद्रित और अकेलेपन की जिंदगी ही जी रहे हैं। बीते एक दशक में युवाओं के वैवाहिक रिश्तों में भी बिखराव की स्थितियां बन गई हैं। सामंजस्य और समझ की कमी पति और पत्नी दोनों में देखने को मिल रही है। कारण चाहे जो भी हो देश में बढ़ते खुदकुशी के आंकड़ों को देखते हुए परामर्श केंद्र, अपनों का साथ-सहयोग और हालातों से लड़ने का मनोबल ही काम आ सकता है। वर्ष 2016 की डब्ल्यूएचओ की रिपोर्ट के मुताबिक भारत की आत्महत्या दर वैश्विक दर से अधिक है। हमारे यहां आत्महत्या की दर प्रति एक लाख व्यक्ति पर 16.5 लोग हैं, जबकि वैश्विक स्तर पर प्रति एक लाख में 10.5 लोग खुदकुशी करते हैं। ग्लोबल बर्डन ऑफ डिजीज स्टडी-2016 के मुताबिक साल 2016 में सर्वाधिक आत्महत्याएं हमारे देश में ही हुई थीं। दुनियाभर में 8,17,000 लोगों ने खुदकुशी की थी, जबकि अकेले भारत में यह संख्या 2,30,314 थी। ऐसे में व्यक्तिगत और सामुदायिक स्तर पर जीवन से हारने के बढ़ते आंकड़ों की इस आपातकालीन स्थिति से निकलने के लिए प्रयास किए जाने जरूरी हैं। मौजूदा दौर में जिंदगी की आपाधापी, अकेलापन और अवसाद जीना मुश्किल ही नहीं कर रहे, बल्कि जिंदगी भी छीन रहे हैं।

हर परिवार और समग्र समाज के लिए इन प्रश्नों पर विचार करना आवश्यक है। अवसाद और अकेलेपन जैसी समस्याओं पर खुलकर विमर्श किए जाने की दरकार है। बिगड़ते-बिखरते रिश्तों को लेकर सार्थक संवाद किए जाने की जरूरत है, ताकि देश के आम युवा हों या चर्चित चेहरे, जीवन के खात्मे की नहीं, बल्कि खुशहाल और हौसले से भरी राह चुनें।

(लेखक स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

फिल्मी कलाकारों का राष्ट्रवाद

रशीद किदवई ने अपने लेख 'फिल्म कलाकार भी नागरिक हैं' में राजनीति से जुड़े फिल्मी इतिहास को प्रस्तुत करते हुए अभिनेत्री दीपिका पादुकोण और उनकी आने वाली विवादित फिल्म 'छपाक' का बचाव करने की एक लचर कोशिश की है। माना कि सिनेमा जगत से जुड़े लोगों को अपनी दोहरी जिंदगी जीते हुए रील लाइफ से इतर रियल लाइफ में आम आदमी की तरह समाज के साथ जीना पड़ता है। बेशक यह बात दीपिका पादुकोण पर भी लागू होती है जो अपनी रियल लाइफ में बिना सोचे समझे जेएनयू के टुकड़े टुकड़े गैंग का हिस्सा बनकर भारतीय समाज में तिरस्कृत हो रही हैं। विगत में भी फिल्मी कलाकारों का राजनीति से जुड़ाव रहा है, लेकिन अपवाद को छोड़कर सभी फिल्मी कलाकार भारतीयता के भाव से देश की एकता और अखंडता के साथ खड़े दिखाई देते हैं। उनकी फिल्मों के संदर्भ भी समाज सापेक्ष और देशभक्ति से ओतप्रोत हैं। ऐसे में दीपिका पादुकोण के इस आचरण को उचित नहीं ठहराया जा सकता।

pandeyvp1960@gmail.com

ऐसा हो लेखक

पिछले दिनों विश्व (दिल्ली) पुस्तक मेला गई थी। पुस्तकों की भीड़ में जहां अधिकतर लेखक अपनी-अपनी किताबों के प्रचार में व्यस्त दिख रहे थे, वहीं एक लेखक जो बच्चों के ट्रस्ट के पास खड़े होकर उनसे बात कर रहे थे और मेरे ही सामने उन्होंने 2000 रुपये उस ट्रस्ट को दान कर दिया। जहां अधिकतर लेखक उस ओर जा नहीं रहे थे, वहीं जब मैं उस लेखक से मिली, तो जान पाई कि वह उपन्यास, वेंटिलेटर इश्क, के लेखक हैं और उनके उपन्यास से उन्हें जो भी रॉयल्टी प्राप्त होती है, वह गरीब बच्चों की शिक्षा, शहीद परिवारों को दान देकर देश के लिए अपना फर्ज निभाते हैं। देश को ऐसे लेखकों की सख्त जरूरत है, जो सोशल मीडिया से निकलकर देश के बच्चों व शहीद परिवारों के लिए थोड़ी-सी सही, परंतु मदद कर रहे हैं।

biharinumber1@yahoo.com

मेलबाक्स

शिक्षक बड़ा परामर्शदाता

अगले माह से बोर्ड परीक्षाओं का शुभारंभ हो रहा है। प्रतियोगिता के इस दौर में बालकों व उनके अभिभावकों का तनावयुक्त होना स्वाभाविक है। इससे बचने के लिए सरकारें भी अपने स्तर पर परामर्श केंद्रों की व्यवस्था करती हैं, ताकि परीक्षार्थी तनावमुक्त रहकर परीक्षा दे सकें। लेकिन माता- पिता अथवा अभिभावकों के अलावा उनके अध्यापक उनके बहुत करीब होते हैं, जो कार्य परामर्श केंद्रों में बैठे परामर्शदाता नहीं कर सकते वह कार्य एक अध्यापक आसानी से कर लेता है। क्योंकि अध्यापक कक्षा के प्रत्येक बालक की केस स्टडी से वाकिफ होता है। देखा जाए तो वह उनके लिए सबसे बड़ा परामर्शदाता होता है।

पवन कुमार मुरली, कादीपुर गुरुग्राम

सीएए का विरोध

विरोध के नाम पर सड़कों पर हिंसा करने का चलन बन गया है। यह चिंता की बात है। तोड़फोड़ से देश की संपत्ति व जानमाल को नुकसान होता है। नागरिकता संशोधन कानून (सीएए) का मकसद अवैध घुसपैठियों को रोकना है, क्योंकि दुनिया का कोई देश घुसपैठियों को स्वीकार नहीं कर सकता है। फिर इसका विरोध क्यों? वैसे भी आम जनता इसके विरोध में नहीं है। कुछ लोग विरोध कर रहे हैं। इनके पीछे भी कुछ राजनीतिक दल हैं, जो उनको उकसा रहे हैं। सरकार को चाहिए कि विरोध करने वालों से सीधे बात करे और उनकी शंकाओं का समाधान करे।

murarimishra580@gmail.com

विपक्ष का विरोध

दैनिक जागरण के 9 जनवरी के अंक में प्रकाशित प्रदीप सिंह का लेख, नफरत की राजनीति में झुलसता विपक्ष, पढ़ा। लेखक की बात सही है कि विपक्ष के नेता झुंझलाहट में हैं और नागरिकता संशोधन कानून केवल बहाना है। वे समझ नहीं पा रहे हैं कि विरोध किस बात का करना है और किसका नहीं। भाजपा पिछले करीब छह साल से सत्ता में है और बहुत से फैसले गलत भी लिए हैं, लेकिन उनपर विपक्ष का ध्यान ही नहीं है।

बाल गोविंद, नोएडा

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।

अपने पत्र इस पते पर भेजें :
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल : mailbox@jagran.com

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त. पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन.संपादकीय निदेशक-महेन्द्र मोहन गुप्त. प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग,रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 *इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई शुल्क अतिरिक्त।